**ओ३म्**

**आज 159 वीं जयन्ती पर**

**‘दयानन्द भक्त और क्रान्तिकारियों के प्रथम गुरू पं. श्यामजी कृष्ण वर्म्मा’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

गुजरात की भूमि में महर्षि दयानन्द के बाद जो दूसरे प्रसिद्ध क्रान्तिकारी देशभक्त महापुरूष उत्पन्न हुए, वह **‘पं. श्यामजी कृष्ण वर्म्मा’** के नाम से विख्यात हैं। पं. श्यामजी कृष्ण वर्म्मा ने देश से बाहर इंग्लैण्ड, पेरिस और जेनेवा में रहकर देश को अंग्रेजों की दासता से पूर्ण स्वतन्त्र कराने के लिए अनेक विध प्रशंसनीय कार्य किये। उनका **जन्म 4 अक्तूबर, सन् 1857** को गुजरात के कच्छ भूभाग के माण्डवी नामक कस्बे में श्री कृष्णजी भणसाली के यहां एक निर्धन वैश्य परिवार में हुआ था। आप आयु में महर्षि दयानन्द जी से लगभग साढ़े बत्तीस वर्ष छोटे थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा माण्डवी की ही एक प्राइमरी पाठशाला में हुई। जब आप 10 वर्ष के हुए तो आपकी माताजी का देहान्त हो गया। इसके बाद आपका पालन-पोषण ननिहाल में हुआ। आपने ननिहाल भुजनगर में रहकर वहां के हाईस्कूल में अपनी शिक्षा को जारी रखा। आप 12 वर्ष की आयु में एक **‘विदुषी संन्यासिनी माता हरिकुंवर बा’** के सम्पर्क में आये। उनकी प्रेरणा से आपने संस्कृत भाषा पर अधिकार प्राप्त कर लिया। कच्छ निवासी सेठ मथुरादास भाटिया आपकी प्रतिभा से प्रभावित होकर आपको अध्ययनार्थ मुम्बई ले गये और वहां विलसन हाईस्कूल में प्रविष्ट कराया। यहां सर्वोच्च अंक प्राप्त कर आपने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया और आपको **‘सेठ गोकुलदास काहनदास छात्रवृत्ति’** प्राप्त हुई। इस छात्रवृत्ति के आधार पर आपने मुम्बई के प्रसिद्ध **‘एल्फिंस्टन हाईस्कूल’** में अध्ययनार्थ प्रवेश ले लिया। बम्बई के एक धनी सेठ श्री छबीलदास लल्लू भाई का पुत्र रामदास श्यामजी का सहपाठी था। दोनों में मित्रता हो गई। सेठ छबीलदास जी को इसका पता चला तो पुत्र को कहकर श्यामजी को अपने घर पर बुलाया। आप श्यामजी के व्यक्तित्व, सौम्य व गम्भीर प्रकृति तथा आदर भाव आदि गुणों से प्रभावित हुए और आपने उन्हें अपना जामाता-दामाद बनाने का निर्णय ले लिया। इसके कुछ दिनों बाद उनकी 13 वर्षीय पुत्री भानुमति जी से 18 वर्षीय श्यामजी का सन् 1875 में विवाह सम्पन्न हो गया।

 मुम्बई आकर श्यामजी कृष्ण वर्मा प्रार्थना समाज के समाज सुधार आन्दोलन से जुड़ गये थे। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 29 जनवरी से 20 जून, 1875 तक वेदों का प्रचार करते हुए मुम्बई में प्रवास किया था। मुम्बई में उन दिनों बुद्धिजीवी लोगों में उनके प्रवचनों की चर्चा होती थी। आप स्वामीजी के सम्पर्क में आये और उनके न केवल व्यक्तित्व व वैदिक ज्ञान से ही परिचय प्राप्त किया अपितु उनकी सर्वांगीण विचारधारा व कार्यों को जान कर वह उनके अनुयायी बन गये। **10 अप्रैल, सन् 1875 को जब मुम्बई के गिरिगांव-काकड़वाड़ी मोहल्ले में प्रथम आर्यसमाज की स्थापना की गई तो वहां उपस्थित लगभग 100 से कुछ अधिक लोगों में पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा सहित उनके श्वसुर श्री छबीलदास जी व श्याला श्री रामदास बतौर संस्थापक सदस्य उपस्थित थे।** 12 जून, सन् 1875 को महर्षि दयानन्द जी का रामानुज सम्प्रदाय के आचार्य पं. कमलनयन के साथ मूर्तिपूजा विषय पर शास्त्रार्थ होने के अवसर पर भी आप इस शास्त्रार्थ में श्रोता व दर्शक के रूप में उपस्थित थे। इस शास्त्रार्थ में दयानन्द जी की विद्वता का लोहा सभी ने स्वीकार किया था। इसके प्रभाव से आप महर्षि दयानन्द के और निकट आये और उनकी प्रेरणा व अपनी इच्छा से आपने वैदिक सहित्य का अध्ययन किया तथा उनके शिष्य बन गये। स्वामी दयानन्द जी के सान्निध्य से उनका संस्कृत का ज्ञान और अधिक परिष्कृत, परिपक्व व समृद्ध हुआ। स्वामी दयानन्द की प्रेरणा से पं. श्यामजी कृष्ण वर्म्मा ने नासिक की यात्रा कर 1 व 2 अप्रैल, 1877 को वहां संस्कृत में वेदों पर व्याख्यान दिये। लोग एक ब्राह्मणेतर व्यक्ति से संस्कृत में धारा प्रवाह व्याख्यान की अपेक्षा नहीं रखते थे। इन व्याख्यानों का वहां की जनता पर गहरा प्रभाव हुआ। इसके बाद आपने अहमदाबाद, बड़ौदा, भड़ौच, भुज और माण्डवी सहित लाहौर में जाकर वेदों पर व्याख्यान दिये। आपके संस्कृत व्याख्यानों से घूम मच गई और श्रोताओं ने आपकी भूरि भूरि प्रशंसा की। पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा ने स्वामी दयानन्द जी के यजुर्वेद व ऋग्वेद भाष्य के प्रकाशन व उसके डाक से प्रेषण के प्रबन्धकत्र्ता का कार्य भी पर्याप्त अवधि तक किया। इंग्लैण्ड जाने तक आप यह कार्य करते रहे थे।

 आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, लन्दन में संस्कृत विभाग के विभागाध्यक्ष सर मोनियर विलियम सन् 1878 में भारत आये थे। महर्षि के निकटवर्ती शिष्य श्री गोपाल हरि देशमुख की अध्यक्षता में पूना में उनका व्याख्यान आयोजित किया गया था। पं. श्यामजी कृष्ण वर्म्मा इस व्याख्यान में न केवल सम्मिलित ही हुए अपितु उनका भी धारा प्रवाह संस्कृत में व्याख्यान हुआ जिसका गहरा प्रभाव सर मोनियर विलियम और श्रोताओं पर भी हुआ। **उन्होंने पं. श्यामजी कृष्ण वर्म्मा को आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में संस्कृत के सहायक प्रोफेसर के पद का प्रस्ताव दिया।** वह इस प्रस्ताव से सहमत हुए। स्वामी दयानन्द जी को भी पंण्डित जी ने जानकारी दी। स्वामी दयानन्द जी ने न केवल अपनी सहमति व्यक्त की अपितु उन्हें इंग्लैण्ड जाकर करणीय कार्यों के बारे में मार्गदर्शन दिया। बाद में स्वामीजी ने उन्हें जो पत्र लिखे उससे भी स्वामीजी के श्यामजी के मध्य गहरे गुरू शिष्य संबंध का अनुमान होता है। श्यामजी ने लन्दन पहुंच कर 21 अप्रैल, सन् 1879 को पदभार सम्भाला था। लन्दन में आपने बैरिस्ट्री की परीक्षा पास करने हेतु भी **‘इनर टैम्पल’** में प्रवेश लिया। आपने सन् 1881 के आरम्भ में **‘रायल एशियाटिक सोसायटी’** के निमन्त्रण पर **‘भारत में लेखन कला का आरम्भ’** विषय पर अपना शोध प्रबन्ध पढ़ा। इस प्रस्तुति से प्रभावित होकर आपको रायल एशियाटिक सोसायटी का सदस्य बना लिया गया। **‘इंग्लैण्ड एम्पायर क्लब’** एक ऐसा क्लब था जिसमें राज परिवार के लोग ही सदस्य बन सकते थे। **श्री श्यामजी कृष्ण वर्म्मा ऐसे पहले भारतीय थे जिन्हें क्लब की सदस्यता दी गई थी।** सन् 1881 में ही इंग्लैण्ड में भारत मंत्री ने आपको **प्राच्य विद्या विशारदों के बर्लिन सम्मेलन** में भाग लेने के लिए अपने प्रतिनिधि के रूप में भेजा था। सन् 1883 में आपने लन्दन में बी.ए. की परीक्षा पास की और भारत आ गये। स्वामी दयानन्द जी ने अपने इच्छा पत्र में श्यामजी कृष्ण वर्म्मा को अपनी उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का सदस्य मनोनीत किया था। **28-29 दिसम्बर, 1883 को हुए सभा की अजमेर के मेवाड़-दरबार की कोठी में आयोजित प्रथम बैठक में आप सम्मिलित हुए।** **मार्च, 1884 में आप सपत्नीक लन्दन लौट गये थे और नवम्बर, 1884 में आपने बैरिस्ट्री की सम्मानजनक परीक्षा उत्तीर्ण की। आप पहले भारतीय थे जिन्होंने आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, लन्दन से बैरिस्ट्री पास की थी।** आप जनवरी, 1885 में पुनः स्वदेश लौट आये थे।

 भारत आकर श्यामजी कृष्ण वर्मा रतलाम राज्य के सन् 1885 से सन् 1888 तक दीवान रहे। इसके बाद उन्होंने अजमेर में वकालत की। उदयपुर के महाराणा फतेहसिंह जी ने उन्हें दिसम्बर 1892 में अपने राज्य की मंत्रि परिषद में सदस्य मनोनीत किया। उदयपुर में आप दो वर्षों तक **‘राज्य कौंसिल’** के सदस्य रहे। 6 फरवरी 1894 को आप जूनागढ़ रियासत के दीवान बने परन्तु जूनागढ़ के कुछ कटु अनुभवों से अंग्रेज जाति के प्रति उनके विश्वास को गहरी चोट लगी। **’इंडियन नेशलन कांग्रेस’** की दब्बू नीति उन्हें पसन्द नहीं थी। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक जी से उनकी मैत्री थी। चापेकर बन्धुओं द्वारा जब प्लेग कमिश्नर मिस्टर रैण्ड और लेफ्टिनेंट अर्येस्ट की हत्या की गई, तब अंग्रेज सरकार ने तिलक जी को अठारह मास का कारावास का दण्ड दिया। इससे श्यामजी का अंग्रेजों के प्रति विश्वास समाप्त हो गया। श्याम जी का महर्षि दयानन्द के वेद सम्मत राजनीतिक विचारों में पूर्ण विश्वास था। इसका क्रियान्वयन उन दिनों कांग्रेस द्वारा किंचित परिवर्तन के साथ किया जा रहा था जिससे पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा सहमत थे एवं इसके द्वारा शुभपरिणामों की आशा भी रखते थे।

 पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा ने अपने विवेक से विदेश में जाकर भारत की स्वतन्त्रता के लिए कार्य करने का निर्णय किया। वह उदारवादी विचारों से स्वतन्त्रता प्राप्ति के प्रति पूरी तरह से आश्वस्त नहीं थे। अतः सन् 1897 के अन्तिम दिनों में वह इंग्लैण्ड आ गये। यहां रहकर आपने अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये जिन्हें पूर्णरूपेण इस संक्षिप्त लेख में प्रस्तुत करना कठिन है। प्रमुख कार्यों में से एक कार्य आपके द्वारा लन्दन में एक मकान खरीदा जिसे इण्डिया हाउस का नाम दिया। यह मकान क्रामवेल एवेन्यू हाईगेट का मकान नं. 65 था। यह इण्डिया हाउस ही हमारे क्रान्तिकारियों का इंग्लैण्ड में मुख्य निवास स्थान व क्रान्तिकारी गतिविधियों का केन्द्र बना। पं. श्याम जी ने भारत से इंग्लैण्ड जाने वाले विद्यार्थियों को छात्रवृतियां देना भी आरम्भ किया जिसमें एक शर्त यह होती थी कि छात्रवृत्ति प्राप्त करने वाला व्यक्ति अंग्रेजों की नौकरी नहीं करेगा और न उनसे कोई लाभ प्राप्त करेगा। डा. सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार यह **‘इण्डिया हाउस’** इंग्लैण्ड में भारतीय क्रान्तिकारी गतिविधियों और क्रिया-कलापों का सबसे बड़ा केन्द्र बना रहा। जिन लोगों ने छात्रवृत्ति प्राप्त कर इंग्लैण्ड में आकर इण्डिया हाउस में निवास किया। इन छात्रों में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी वीर विनायक दामोदर सावरकर भी थे जो सन् 1906 में वहां पहुंचे थे। इंग्लैण्ड में रहते हुए सन् 1905 में पं. श्यामी जी कृष्ण वर्मा ने एक अंगे्रजी मासिक पत्रिका **‘इंडियन सोशियोलोजिस्ट’** का प्रकाशन आरम्भ किया जिसका उद्देश्य उन्होंने भारत में राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक सुधार घोषित किया। अपने आरम्भिक लेख में आपने लिखा कि यह पत्र बताएगा कि ब्रिटिश शासन के नियंत्रण में भारतीयों के साथ कैसा दुर्व्यवहार किया जाता है और उस शासन के प्रति भारतीयों के मन में क्या भावनाएं हैं। पंण्डित जी ने यह पत्र इंग्लैण्ड व विदेशों में लोकमत को जाग्रत करने की दृष्टि से आरम्भ किया था। पं. श्यामजी का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य इंग्लैण्ड में **‘इंडियन होमरूल सोसायटी’** की स्थापना करना था। यह सोसायटी 18 फरवरी, 1905 को स्थापित की गई थी। **इसका पहला उद्देश्य भारत में होमरूल अर्थात् स्वशासन स्थापित करना था।** दूसरा उद्देश्य पहले लक्ष्य की प्राप्ति के लिए इंग्लैण्ड में रहकर सभी आवश्यक कार्य करना था जिससे स्वशासन का अधिकार प्राप्त हो सके। संस्था का तीसरा उद्देश्य देशवासियों में स्वाधीनता तथा राष्ट्रीय एकता से संबंधित बौद्धिक सामग्री व ज्ञान को उलब्ध कराना था। श्यामजी कृष्ण वम्र्मा इस सोसायटी के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष सरदार सिंह राणा, जे. एम. पारीख, अब्दुल्ला सुहरावर्दी और गोडरेज तथा मन्त्री जे. सी. मुखर्जी बनाये गये थे। इन सभी लोगों द्वारा यह घोषणा की गई थी कि उनका उद्देश्य **‘‘भारतीयों के लिए, भारतीयों के द्वारा और भारतीयों की सरकार”** स्थापित करना है। एक प्रकार से सन् 1905 में उठाया गया यह कदम पूर्ण स्वराज्य प्राप्ति की दिशा मे बहुंत बड़ा निर्णय व कार्य था जिसे कांग्रेस ने बहुत बाद में अपनाया। वम्र्मा जी की गतिविधियां दिन प्रतिदिन तीव्रतर होती जा रही थी। मई और जून 1907 में पं. श्यामजी कृष्ण वर्म्मा के इण्डियन सोशियोलोजिस्ट में लेखों से समूचे इंग्लैण्ड में खलबली मच गई। इसका परिणाम विचार कर जून, 1907 में वह पेरिस चले गए और वहीं से भारत के क्रान्तिकारियों का मार्गदर्शन करने लगे। उनके पेरिस जाने के कारण **‘इंडियन होमरूल सोसायटी’** का मुख्यालय भी उनके पास पेरिस स्थानान्तरित हो गया। 19 सितम्बर, 1907 को इण्डियन सोशियोलोजिस्ट पत्र पर अंगे्रज सरकार ने पाबन्दी लगा दी। इस पत्र के मुद्रकों श्री आर्थर बोर्सले और एल्फ्रेड एल्ड्रेड को गिरफतार कर लिया गया और उन्हें एक एक वर्ष के कारावास का सजा सुनाई गई। श्यामजी पेरिस में रह रहे थे और वहीं इण्डियन सोशियोलोजिस्ट का प्रकाशन कर रहे थे। सन् 1914 में पेरिस में भी परिस्थितियां उनके लिए प्रतिकूल हो गईं अतः वह पेरिस छोड़कर जून, 1914 में जेनेवा (स्विटजरलैण्ड) चले गये। यहां रहते हुए भी आप अपना पत्र अंग्रेजी व फ्रेंच भाषाओं में निकालते रहे। इसी बीच दूसरा विश्वयुद्ध आरम्भ हो गया। राजनैतिक कारणों से आपको अपने पत्र का प्रकाशन स्थगित करना पड़ा। इस प्रकार निरन्तर कार्य करते रह कर वह आप वृद्ध हो गये थे। अब आप अधिक सक्रिय भूमिका नहीं निभा सकते थे। अतः देश में चल रहे सत्याग्रह आन्दोलन को आपने अपना समर्थन दिया। **31 मई, 1930 को लगभग 73 वर्ष की आयु में जेनेवा में ही महर्षि दयानन्द के इस शिष्य और भारत माता के योग्य पुत्र पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा का निधन हो गया।** प्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता श्री सरदार सिंह राणा, मैडम भीखाजी रूस्तम जी कामा, जे.एम. पारीख, लाला हरदयाल, विनायक दामोदर सावरकर, मौलवी मोहम्मद बर्कतुल्लाह, नीतिसेन द्वारकादास, मिर्जा अब्बाज उर्फ मुहम्मद अब्बास आदि उनके देशभक्ति के कार्यों में उनके सहयोगी रहे।

 श्री श्यामजी कृष्ण वर्म्मा महर्षि दयानन्द जी के योग्य शिष्य, संस्कृत व वैदिक साहित्य के विद्वान होने के साथ भारत की आजादी के लिए संघर्ष करने वाले तथा क्रान्ति को स्वतन्त्रता प्राप्ति का साधन मानने वाले प्रथम चिन्तक, विचारक व अपने विचारों को क्रियात्मक रूप देने वाले आद्य महापुरूष थे। देश की आजादी में उनका योगदान प्रशंसनीय एवं महत्वपूर्ण है। उनके विचारों की अग्नि व कार्यों से देश को अनेक क्रान्ति धर्मी युवक मिले जिन्होंने अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए विवश किया था। **उनकी आज 159 वीं जयन्ती पर उन्हें शत शत नमन है।**

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**